International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
Volume-6, Issue-6 December- 2019 P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

महिला उत्पीड़न के संदर्भ में जनजातीय समाज में डायन प्रथा (दक्षिणी राजस्थान के विशेष संदर्भ में)

सोहनलाल वड़किया
(व्याख्याता हिन्दी साहित्य)
श्री योगेश्वर स्नात्कोत्तर महाविद्यालय, आमलीपाड़ा, सज्जनगढ़

भारत विश्व के उन गिने–चुने देशों में से एक है जिसकी ऐतिहासिक प्राचीनता, भौगालिक विशालता और सांस्कृतिक विविधता पर गर्व कर सकते है। कोई भी समाज जितना प्राचीन होता है उसमें उतनी ही अधिक बहुलता और विविधता पाई जाती है। यही कारण है कि हमारे यहां सामाजिक–सांस्कृतिक और भौगोलिक विविधता अपने चरम रूप में मौजूद है। जहां एक और महानगरों में आधुनिकता की चमक और गति हमें रोमांचित और स्तब्ध कर देती है, वही देश के सुदूर ओर अंदरूनी क्षेत्रों, वन प्रदेशों और पहाड़ों पर बसे समुदायों का जनजीवन हमें यह सोचने पर विवश करता है कि हम कितनी मंथर गति से आगे बढ़ रहे है। जनजातियां या आदिवासी समुदाय हमारी विविधता और प्राचीनता की पुष्टि करते प्रतीत होते है।

भारतीय समाज पुरूष प्रधान समाज है, जहां पर नारी सदैव पुरूषों की दासता, अन्याय एवं शोषण का शिकार रही है। यह विडम्बना रही है कि एक और जहां भारतीय समाज में नारी को पूजनीय देवी की उपमा दी गई। जनजातीय क्षेत्रों में नारी के दैवीय स्वरूप के पूजन की परम्परा रही, वही दूसरी और उसे अपने व्यक्तित्व से वंचित कर एक वस्तु के रूप में प्रयुक्त करने का हैय कार्य भी किया गया। वहीं साहित्य में मां की ममता, करूणा, त्याग और तपस्या का मर्मस्पर्शी गुणगान किया गया तो एक और उसे समाज में यातनाओं एवं उत्पीड़न का शिकार होना पड़ा।

भारत में अनुसूचित जनजाति वर्ग की महिलाओं की स्थिति अत्यन्त दयनीय रही है। आज जब हम 21वीं शताब्दी में प्रवेश कर चुके है, तो भी इस वर्ग की महिलाएं असमानता, शोषण एवं सामाजिक कुरीतियों से परिपूर्ण जीवन जी रही है। उनके साथ न केवल घर में बल्कि समाज में भी असमानता का व्यवहार होता है वे दोहरी असमानता तथा शोषण का शिकार हो रही है।

राजस्थान का दक्षिणी भाग जनजातियों की संख्या एवं विस्तार की दृष्टि से बहुत ही घना बसा हुआ है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार राजस्थान के इस दक्षिणी भाग में कुल जनजाति जनसंख्या का लगभग 55 प्रतिशत भाग इसी क्षेत्र में बसा हुआ है। भील, मीणा, गरासिया और डामोर जनजातियां मुख्यतः इसी क्षेत्र में पाई जाती है। राजस्थान में 13.5 प्रतिशत जनसंख्या अनुसूचित

जनजातियों की है जिसमें 2.53 प्रतिशत शहरी जनसंख्या है। राज्य मे सर्वाधिक अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या बांसवाड़ा में 72.27 प्रतिशत, डूंगरपुर में 65.14 प्रतिशत, प्रतापगढ़ में 68 प्रतिशत तथा उदयपुर जिले में 47.86 प्रतिशत निवासरत है।

जनजातीय क्षेत्र जो शहरी क्षेत्र के नजदीक आ गए अथवा कुछ परिवार चाहे रोजगार की दृष्टि से ही शहरी क्षेत्रों में आ गए उनके परिवार विकास के दौर में सम्मिलित हुए इस कारण उनकी महिलाएं भी आधुनिकीकरण से प्रभावित होकर आर्थिक व शिक्षा की दृष्टि से सम्पन्न हो गए। दक्षिणी राजस्थान की शेष बची 60 प्रतिशत महिलाएं शिक्षा से वंचित रह जाने के कारण उन्हीं रूढ़िवादी परम्पराओं के तहत प्रताड़ित हो रही है। जनजाति समाज आज के वैज्ञानिक युग में भी रूढ़िवादी एवं अंधविश्वासी बना हुआ है। बीमारी की अवस्था में डॉक्टरों व वेधों के पास उपचार कराने के बजाय वे ओझाओं एवं झाड़–फूंकार करने वालों के चक्कर लगाने लगता है।

जादू–टोना पारलौकिक शक्ति को अपने नियंत्रण में करने का प्रमुख साधन माना जाता है। इसका अस्तित्व विश्व के प्रत्येक समाज मे किसी न किसी रूप में मिलता है। विकसित समाजों में विज्ञान की प्रगति के साथ इसका प्रभाव गौण होता जा रहा है परन्तु जनजाति समाज में इसका वर्चस्व आसानी से दृष्टिगोचर हो जाता है। जनजातीय समाज में स्त्रियों पर डायन (डाकन) होने का आरोप लगाकर उन्हें मार डालने व प्रताड़ित करने की कुप्रथा सदियों से प्रचलित है। डायन प्रथा की जड़े जनजातीय समाज की तह तक जमी हुई है। इस प्रथा ने जनजातीय महिलाओं की सामाजिक व पारिवारिक स्थिति को बद से बदत्तर बना दिया है। जनजाति समाज में डायन प्रथा सदियों से एक अत्यन्त बर्बर प्रथा प्रचलित है, जिसमें महिला को डायन (डाकन) मानते हुए उसके साथ क्रूरतापूर्वक व्यवहार किया जाता है। यह क्रूरता या उत्पीड़न इस हद तक बढ़ जाता था कि उसके फलस्वरूप महिला की मृत्यु भी हो जाती है।

जनजातीय क्षेत्र में जब कोई व्यक्ति असाध्य रूप से बीमार पड़ता है तो भोपा कहलाने वाले व्यक्ति की सलाह ली जाती है जो हर गांव में सुलभ रहता है तथा उसके विषय में यह माना जाता है कि वह दैवी ज्ञान रखता है। भुत–प्रेतों से रक्षा हेतु भोपा लोगों को दौरा–ताबीज और जन्तर आदि मंत्र सिद्धि कर पहनाते है। जब किसी बीमार व्यक्ति की मृत्यु हो जाती थी, लोग मौका मिलते ही डायन मान ली गई व इस व्यक्ति की बीमारी व मृत्यु का कारण समझी गयी स्त्री को पकड़ लेते है व उसकी आंखों में मिर्च भरकर उसे पेड़ से उल्टा लटका देते है।

दक्षिणी राजस्थान में प्रचलित डायन प्रथा को रोकने के लिए सर्वप्रथम ब्रिटिश सरकार ने ए.जी.जी. लॉरेन्स को निर्देश दिया कि वह राजपूत राजाओं को उनके राज्य में इस प्रथा को गैर कानूनी घोषित करें तथा उल्लंघन करने वालों के लिए कठोर दण्ड की व्यवस्था करें।

मेवाड़ के महाराणा स्वरूप सिंह ने 22 अक्टूबर, 1853 को डायन प्रथा को रोकने के संदर्भ में एक घोषणा पत्र जारी किया। महाराणा द्वारा जारी किये गये घोषणा पत्र में कहा गया कि जो कोई भी व्यक्ति किसी महिला से उसे डायन होने के आधार पर बुरा बर्ताव करेगा या उसे पीड़ित करेगा उसे 6 महीने के कारावास का दण्ड़ दिया जायेगा और महिला की मृत्यु होने की स्थिति में ऐसे व्यक्ति को हत्यारा माना जायेगा और इस अपराध के अनुसार दण्डित किया जायेगा, ऐसे व्यक्तियों को भी कारावास का दण्ड़ दिया जायेगा जो भोपा या डायनों को बताने वालों के रूप में कार्य करेगा।

आजादी के 65 वर्षो बाद भी डायन प्रथा जैसी कुरीति पर अनेक कानून बनाए जाने के बावजूद भी इस घिनौनी कुप्रथा पर रोक नहीं लगा पाना जनजाति समाज के साथ ही गैर जनजाति समाज के लिए भी एक कलंक की बात है। जनजातीय क्षेत्रों के विकास एवं सामाजिक उत्थान हेतु केन्द्र एवं राज्य सरकारों तथा गैर सरकारी संस्थाओं के प्रयासों के बावजूद भी यह प्रथा समाज में व्यापक रूप से प्रचलित है।

निष्कर्षः–

इस अध्ययन के द्वारा यह स्पष्ट हुआ है कि डायन प्रथा की जड़े जनजातियों में गहराई तक जमी हुई है। यह महिला उत्पीड़न के संदर्भ में जनजाति समाज की एक प्रमुख बुराई है। इस प्रकार का शोध कार्य समस्या पर समग्र दृष्टि डालने के लिये आवश्यक है। जनजातियों में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों एवं अंध विश्वास को मिटाने के बारे में पुनर्विचार करने एवं जनजातीय महिलाओं के उत्पीड़न को कम करने की दिशा में मार्गदर्शन मिल जायेगा। अध्ययन के प्रकाश में मीड़ियाकर्मी भी न केवल जनजाति समाज में व्याप्त डायन जैसी भयानक कुरीति एवं जनजातीय महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों का मूल्यांकन कर पायेंगे बल्कि समाज में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों को दूर करने हेतु समाज में जनजागृति लाने में अहम् भूमिका निभायेंगे। सरकार द्वारा जनजातीय क्षेत्रों में अंधविश्वास एवं जादू–टोना तथा महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों को रोकने के लिए किए गए प्रयासों की तस्वीर स्पष्ट हो जायेगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. Bhowmik, K.L. (1971), "Tribal India : A Profile in Indian Ethnology", Calcutta : World Press
2. Bage, S.K. (1965), "Anthropoligist and Tribal Administration", Journal of Social Research, Vol. 8, No. 1
3. Dutta, Parul Nabendu (1956), "The Santhal : A Study in Culture Change", Delhi : Manager of Publication, Government of India.
4. Erskine, K.D. (1908) "Rajputana Gazatters" Vol – II, Part B, The Mewar Residency, Ajmer
5. Ghurye, G.S., (1943), "The Aborigines-So-Called-and Their Future", Poona : Gokhle Institute of Politics and Economics.
6. Krishna, K.P. and Singh D.P. (1985) Victims of Crime, in Social Change, Rawat Publication, Jaipur Vol. 12, No. 3
7. आहूजा, राम (1999), ''सामाजिक समस्याएँ'' रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर
8. बोहरा, आशारानी (1983) ''भारतीय नारी दशा और दिशा'' नेशनल पब्लिशिंग, नई दिल्ली
9. भट्ट, नीरजा (2007) '' 18वीं व 19वीं शताब्दी में राजस्थान का भील समाज'' हिमांशु पब्लिकेशन्स उदयपुर
10. भाणावत, महेन्द्र (1993) ''उदयपुर के आदिवासी'' भारत के लोक कला मण्डल उदयपुर
11. दोषी, शम्भुलाल एवं व्यास, नरेन्द्र एन (1992) ''राजस्थान की अनुसूचित जनजातियाँ'' प्रथम संस्करण हिमांशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर
12. मेहता, चेतनसिंह (1942) ''महिला एवं कानून'' आशीष पब्लिशिंग हाऊस, पंजाबी बाग, नई दिल्ली
13. राठौड़ अजयसिंह (1994), ''भील जनजाति शिक्षा और आधुनिकीकरण'' पंचशील प्रकाशन, जयपुर
14. श्रीवास्तव, सुधारानी (1993), ''भारत में महिलाओं की वैधानिक स्थिति'' कॉमनवैल्थ पब्लिशर्स, नई दिल्ली